Global Journal of Multidisciplinary Studies
Volume 8, Issue 11, October 2019
ISSN:- 2348-0459
Available online at www.gjms.edwin.co.in

आनन्दमय कोश का स्वरूप एवं कार्य
(कारण शरीर की विवेचना)

डॉ. उषा खंडेवाल
पी.एच.डी.,रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

सारांश– 'आनंदमय कोश' का तात्पर्य आनंद का भण्डार हैं, आचार्य श्रीराम शर्मा ने कारण शरीर को भाव संवेदना का उद्गम स्त्रोत माना ह। यदि मनुष्य करुणा, आत्मीयता जैसी दिव्य संवेदनाओं से ओतप्रोत हो तो वह आत्म जागृति की स्थिति कही जाती है। "आत्मजागृति एवं आत्मबोध साधना की उच्च स्थिति है, जिसमें मनुष्य अपनी गरिमा को देवात्मा स्तर तक अनुभव कर सकता है।"[1]वस्तुतः यह आध्यात्मिक दृष्टिकोण हो अमृत है। आचार्य शर्मा के उपर्युक्त विचार ऋगवेद के निम्नलिखित विचारों से प्रभावित प्रतीत होते हैः–

परिचय–

''नूनव्य से नवीन से सूक्ताय साधया पथः।
प्रत्यद्रोचया रुचः।।
पवमान महिश्रवो गामश्वं रासि वीरवत्।
सना मेर्धा सना स्वः।।"[2]

अर्थात् यह 'सोम' जिसके अंतःकरण में प्रतिष्ठित होता है, उसमें आत्मविकास और सुख समुन्नति की अलौलिक प्रेरणायें अंतःकरण से प्रस्फुटित होती है। अथर्ववेद में कहा गया है–"सोमेन पूर्ण कलशं विभर्शि।"[3] अर्थात् सोम में पग शीर्श कला इसी शरीर में है। आचार्य शर्मा ने 'आनंदमय कोश' को केंद्र स्थान 'सहस्त्रार चक्र' माना है, इसे ही अमृत कला कहा गया है।

अन्नमय, प्राणमय, मनोमय एवं विज्ञानमय कोश के उपरांत आनंदमय कोश की साधना का विधान है। जिससे जीव वेदांत 'अयमात्मा ब्रह्म', 'तत्वमसि ब्रह्म','सोऽहमस्मि','सच्चिदानंदो ब्रह्म' एवं 'शिवोऽहं' को अवस्थाप्राप्त कर सके। स्वरूपतः मस्तिष्क को दो सत्ताओं का निवास माना गया है। प्रथम चेतना 'मनोमय कोश' तथा द्वितीय चेतना का सर्वोच्च स्थान 'आनंदमय कोश' कहलाता है।

'आनंदमय कोश'के सबंध में आचार्य शर्मा लिखते हैं कि "जीव और बह्य का सम्पर्कीय क्षेत्र इसी स्थान को माना गया है। यदि यह प्रश्न किया जाये कि शरीर में ईश्वर का निवास कहाँ है इसका सामान्यतः उत्तर दिया जाता है कि मानव की या जीव की सम्पूर्ण सत्ता पर उसकी संव्याप्ति है, परंतु इसका प्रवेश द्वार 'ब्रह्मरन्ध्र' में अवस्थित 'सहस्त्रार चक्र' है। मस्तिष्क के मध्य भाग को ब्रह्मरन्ध्र माना गया है।"[4]''मनःसंस्थान का समस्त नियंत्रण, संचालन, मस्तिष्कीय विधुत के माध्यम से होता है। है। यह विधुत संकेत नाड़ी संस्थान द्वारा विभिन्न अंगों तक भेजे जाते है। यह पृथक–पृथक केंद्र भी परस्पर इस प्रकार जुड़े हुए है कि इन केंद्रों में आदान–प्रदान होता रहता है। इंद्रियों की इस आदान–प्रदान क्रिया को एक उदाहरण के द्वारा समझा जा सकता है। कि आँख के समक्ष कोई स्वादिष्ट व्यंजन आने पर आँख या नेत्र का नियन्त्रक केन्द्र अतिशीघ्र जिह्वा या स्वादेन्द्रिय के केंद्र को सूचना देता है, परिणामस्वरूप जिह्वा से 'लार' के रूप में एक तरल द्रव प्रवाहित होने लगता है। इसी प्रकार मस्तिष्कीय संचार सूत्रों का भी एक केंद्र है, जहाँ अगणित धारा प्रवाहित होती है और उनसे अनेक उन्मेश सक्रिय होते देखे जाते है। योगियों ने इसे दृष्टि से देखकर ही ज्ञात किया था कि मस्तिष्क के मध्य भाग से सहस्त्रो विधुत स्पन्दन प्रस्फुटित हैं, इसीलिए इस आलंकारिक रूप में 'सहस्रदल कमल' के नाम से भी विभूशित किया गया।

आचार्य श्रीराम शर्मा का मत है कि यघपि सम्प्रति वैज्ञानिकों ने जड़ उपकरणों के माध्यम से इन विधुत स्पंदनों के संबंध में जानकारी प्राप्त कर ली जाती है, परंतु इनकी वृद्धि तथा नियंत्रण कैसे होता है? यह रहस्य ही है। इसके बावजूद भी उन्होंने विद्युत परिवर्तनों को 'रेटीकुलर एक्टीवेटिंग सिस्टम''डिफ्यूज थैलेमिक प्रोजेक्शन सिस्टम' 'स्पेसीफिक थैलेमिक प्रोजेक्शन सिस्टम' जैसे नाम दिये हैं।

योग विज्ञान के अंतगर्त 'आनंदमय कोश' को जागृत करने के लिए अनेक योग साधनाओं का महत्व हैं इसके जागरण का अर्थ मात्र इस कोश या सहस्रार चक्र की सक्रियता या तीक्ष्णता में वृद्धि करना नहीं है, अपितु उसे व्यवस्थित, सुनियंत्रित तथा सुनियोजित करना भी आवश्यक हैं इसके अभाव में मस्तिष्कीय विधुत स्पंदन अस्वाभाविक रूप से क्रियाशील होने पर मानसिक रोग उत्पन्न होने की आशंका रहती हैं वैज्ञानिक उपकरण 'इलेक्ट्रोएनसेफेलोग्राफ' के द्वारा मस्तिष्क के भिन्न–भिन्न स्थानों पर मिलने वाले विधुत कंपनों को ज्ञात किया जाता हैं इससे मानसिक स्थिति ज्ञात की जाती हैं

'ब्रह्मरंध्र' की संरचना पर प्रकाश डालते हुये आचार्य शर्मा कहते हैं कि यह कमल–पुष्प के सदृश हैं शरीर विज्ञान की दृष्टि से इस स्थान पर एक 'अगु–गुच्छक' पाया जाता हैं इसमें कमल पुष्प के सदृश अर्थात् सहस्रों पंखुडियों वाली (चित्र क्रमांक 32,33) सूर्य प्रकाश की ज्योति का आभास होता हैं वस्तुतः इस संस्थान में इन संवेदनाओं को कमल पुष्प एवं प्रखर ज्ञान की 'प्रकाश–ज्योति' कहा गया हैं इसी ब्रह्मी शक्ति का प्रतीक 'अखण्ड ज्योति' को माना गया हैं निरंतर प्रज्ज्वलित घृत–दीप, इस ब्रह्मरंध्र अथवा ब्रह्मलोक का ही प्रतिनिधि मानकर पूजन में प्रतिष्ठित किया जाता हैं

'सहस्रार चक्र', दोनों कानों की सीध में भ्रूमध्य भाग के पृष्ठ भाग में, मस्तिष्क के मध्य केंद्र में स्थित हैं इसलिये योग का भी केंद्र स्थान माना गया हैं ब्रह्मरंध्र को निराकार उपासना में दशम् द्वार माना गया हैं, अन्य नौ द्वार–दोनों नासिका छिद्र, दो नेत्र, दो कान, एक मुँह, दो मल–मूत्र छिद्र आदि हैं यह दसवाँ द्वार ब्रह्मरंध्र है, जिसके द्वारा आत्मा परमात्मा का मिलन होता है इस प्रकार आचार्य शर्मा के अनुसार 'आनंदमय कोश' को जागृत स्थिति में व्यक्ति स्वंय आनंदित रहता है एवं दूसरों को भी आनंदित रखने वाला प्रवाह निःसृत करता रहता हैं यह ज्ञानमय अवस्था है आत्मबोध एवं तत्वबोध की ज्ञानधारा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र का सिंचन करती हैं इस आनंद तथा आत्म विस्तार को प्रत्यक्ष किया जा सकता हैं इसीलिये परमेश्वर की विवेचना ''रसो वैसः'' के रूप में की गई हैं

उपासना व भक्ति का संबंध, समन्वय या अद्वेत अनुभूति हैं भक्ति की भाशा में इसे 'ईश्वर–प्रेम' कहते हैं 'प्रेम' की प्रतिक्रिया आत्मीयता, करूणा, सेवा, उदारता एवं सद्भावना हैं व्यावहारिक रूप से इसे ही आत्म विस्तार कहा गया हैं शांडिल्योपनिशद् में भी विवरण मिलता है कि "जीवात्मा और परमात्मा की एकता का अनुभव करने से ज्ञान, ज्ञेय और ज्ञाता, यह त्रिपुरी रहित, परमानंद स्वरूप और चैतन्य अवस्था है, यही समाधि हैं"[5]ब्रह्मोपनिशद् में इस आनंद का वर्णन इस प्रकार हैः–'जागृत, स्वप्न, सुशुप्ति एवं तुरीयावस्था में चतुर्थ तुरीयावस्था, तीनों अवस्थाओं से परे हैं इस अवस्था में आत्मा ब्रह्मरंध्र मे रहती है, ऐसा माना जानना चाहिएं "जहाँ मनुष्य की वाणी और मन नहीं पहुँच सकते, उस आत्मा के आनंद

Global Journal of Multidisciplinary Studies
Volume 8, Issue 11, October 2019
ISSN:- 2348-0459
Available online at www.gjms.edwin.co.in

को जानकर ज्ञानी पुरुष मुक्त बन जाते हैं दूध में घी के समान सर्वत्र व्याप्त आत्मा भी आत्म–ज्ञान और तप द्वारा आनंद प्राप्त करती हैं यह आत्मा ही ब्रह्म है, यही उपनिशदों का परम पद हैं"[6]

वस्तुतः मस्तिष्क श्रद्धा से हृदय तक का विस्तार आनंद की अनुभूति कराता हैं आनंदमय कोश श्रद्धा एवं भाव संवेदना का उद्‌गम केंद्र भी हैं "ईश्वर की अनुभूति उच्च्तम स्थिति हैं"[7]अन्य शास्त्रों से भी इसकी पुष्टि होती हैं आनंदमय कोश के जागृत होने से साधक को सोमरस पान आनंद मिलता हैं 'ऋगवेद' में कहा गया हैं

"पुमन् सोम नः तमासि योध्यां
तनिपुनात्र जंघनः"[8]

अर्थात् यह सोम पाप और अंधकार से लड़ने की प्रेरणा देता है और अपने साधक को वीर बनाता हैं 'गौरक्ष संहिता' में भी कहा गया हैं

"चित्तं चलति नो यस्याज्जिह्वा चरति खेचरीं
तेनेयं खेचरि सिद्धा सर्व सिद्धैनर्मस्कृतां"[9]

अर्थात् जिस योगी का चित चंचल नहीं होता और जिसकी जिह्वा खेचरी में रमण करती हैं उनके लिए यह सभी सिद्धों द्वारा नमस्कार हुई खेचरी मुद्रा सिद्ध हो जाती हैं 'शिव संहिता' में ''आनंदमय कोश की व्याख्या इस प्रकार है "तालु के उपरी भाग रूपी सरोवर में दिव्य स्वरूपवाला सहस्रार है, यह इस ब्रह्मांड रूपी देह के बाहर विद्यमान रहता हैं इसी सहस्रार स्थान का नाम कैलाश है, महेश यही निवास करते हैं''[10] आचार्य श्रीराम शर्मा भी औपनिशद्‌िक् चिंतन से प्रभावित लगते हैं इस प्रकार वे मानते हैं कि सहस्रार चक्र से निकलने वाली ज्ञान गंगा जीवात्मा को पवित्र एवं परितृप्त करती हैं इसी स्थिति में आत्मिक आनंद प्राप्त होता हैं आनंदमय कोश की सार्थकता इस अमृत की अधिकारिक प्राप्ति हैं इस विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि सहस्रार चक्र की साधना के लिए ब्रह्‌रन्ध्र में प्रकाश ज्योति का ध्यान करना और खेचरी मुद्रा द्वारा इस अमृत रस का पान करना, ये दो मार्ग बताये गये हैं इस अमृत रस के पाने से हृदय परिवर्तन होता हैं फलस्वरूप, साधक में आमूलचूल परिवर्तन होता हैं इसका एक दृष्टांत रत्नाकर डाकू का 'वाल्मीकि ऋषि' बन जाना हैं एक सामान्य बालक नरेंद्र का विवेकानंद बन जाना है, कभी–कभी यह अवसर साधक को समर्थ गुरु के माध्यम से ही प्राप्त हो जाता हैं अतः सर्वप्रथम व्यक्तित्व का परिष्कार अपेक्षित है जिससे साधक की पात्रता विकसित होती हैं वह इसकी उच्च स्थिति में पहुँचकर अक्षय–आनंद का लाभ प्राप्त कर सकता हैं

ऋग्वेद, 9/9/8–9
अथर्ववेद, 9/4/6
आचार्य श्रीराम शर्मा, अखण्ड ज्योति, वर्ष 40, अंक 4 पृष्ठ 58
शांडिल्यउपनिशद् 1/11–12
ब्रह्मोपनिशद्, 22–23
आचार्य श्रीराम शर्मा, अखण्ड ज्योति, वर्ष 40, अंक 3, पृष्ठ 74
ऋगवेद, 9/9/7
गौरव संहिता, 1/65
शिवसंहिता 5/186–187